अध्याय 3

गुरुओं के स्तर

गुरु चार प्रकार के होते हैं: पिता, माता, आचार्य या शिक्षक और अंत में सत्गुरु (आध्यात्मिक मार्गदर्शक या मुर्शिदे - कामिल)।

इन सब में से 'सत्गुरु' महानतम अध्यापक होता है क्योंकि वह केवल आध्यात्मिक शिक्षा देता है। जो सांसारिक बुद्धिमत्ता में निपुण होता है उसे आचार्य या प्राध्यापक कहा जाता है क्योंकि वह हमें सामाजिक व्यवहार व सदाचारी जीवन के नियम सिखाता है। सत्गुरु को संत - सत्गुरु भी कहा जाता है। अपने शिष्यों से उसका संबंध केवल आध्यात्मिक होता है क्योंकि वह उनकी आध्यात्मिक उन्नति के लिये होता है और उसे सांसारिक मामलों से कोई मतलब नहीं होता।

आध्यात्मिक दृष्टि से गुरु तीन प्रकार के होते है :

- साध - गुरु
- संत - सत्गुरु, और
- परम संत - सत्गुरु

साध वह है जो त्रिकुटी (ओंकार) के मंडल से पार जाता है, जो सूफ़ियों के अनुसार 'लाहूत' और इस्लामी दर्शन में 'हू' कहलाता है। उसने आत्मा को सभी पर्दों से मुक्त करके पवित्र त्रिगुणातीत होकर देखा होता है (सतो, रजो और तमो; तीनों गुणों से परे - जिनमें कि सभी मानव अपने स्वाभाविक और जन्मजात गुणों के अनुसार विचरण करते हैं); जिसकी आत्मा पांच तत्त्वों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश, जिनसे कि भौतिक संसार बना है); 25 प्रकृतियों (तत्त्वों की विभिन्न मात्रा में सूक्ष्मावस्था); मन और माद्दे से भी पार हो चुकी होती है।

संक्षेप में, वह आत्मज्ञान में निपुण होता है और जब चाहे, अपनी आत्मा को उन विभिन्न कोशों से आज़ाद करा सकता है जिनमें कि यह अमूल्य रत्न की तरह बंद रहती है।

साध की उपमा तिहु गुण ते दूरि।। (272)

(साधु की महानता तीनों गुणों से ऊपर है।)

साधु आत्म निरीक्षण द्वारा अपने आपका अर्थात् 'आत्मा' के असली रूप का अनुभव कर चुका होता है। वह जान जाता है कि आत्मा परमात्मा की अंश है और फिर वह प्रभु ज्ञान के लिये प्रयत्न करता रहता है।

संत वह है जो न केवल आत्म - ज्ञान में बल्कि प्रभु ज्ञान में भी निपुण होता है। वह स्थूल, सूक्ष्म और कारण मंडलों से बहुत आगे तक जाता है। क्योंकि वह सत् का गुरु होता है, इसलिए उसका निवास विशुद्ध आध्यात्मिक मंडल में होता है जिसे तकनीकी रूप से 'सचखंड' या 'मुक़ामे - हक़' कहा जाता है।

परम संत ऐसे सत् का माहिर होता है जो लाब्यान है। वह परमात्मा की उस निरोल अवस्था से एकमेक हो चुका होता है जिसे कबीर ने 'अनामी' तथा औरों ने 'निराला', 'महादयाल' या 'स्वामी' कह कर पुकारा है।

संत या परम संत के बीच मात्र नाम का ही अंतर होता है।

लेकिन उन में से कोई साध, संत या परम संत तब तक गुरु पद पर कार्य नहीं कर सकता जब तक उसे प्रभु की तरफ से ऐसा करने की आज्ञा प्राप्त नहीं होती। जो आध्यात्मिक कार्य करने का अधिकार रखता है, वह साध - गुरु, संत - गुरु या परम संत - गुरु बन जाता है।

एक समय पर अनेक साध, संत या परम-संत हो सकते हैं परंतु जब तक आध्यात्म कार्य करने का अधिकार परमात्मा की ओर से न मिले, उनमें से कोई भी अपनी ओर से गुरुपद या आध्यात्मिक नेतृत्व का काम नहीं कर सकता।

इसलिये साध, संत और परम संत शब्दों का अर्थ 'गुरु' शब्द से बहुत अधिक विस्तृत है। गुरु शब्द सिर्फ आध्यात्मिक शिक्षक के लिए प्रयुक्त होता है जबकि बाकी सब विभिन्न स्तरों के आध्यात्मिक अनुभवी होते हैं।

गुरु को प्रभु की तरफ से अधिकार प्राप्त होता है और वह प्रभु के हुक्म से काम करता है जैसे कि वाइसराय अपने सम्राट के आदेशों पर कार्य करता है।

फिर गुरु दो तरह के होते हैं :

1. **स्वतः संत सत्गुरुः** वे जन्म से ही संत होते हैं और संसार में सीधे प्रभु से अधिकार लेकर आते हैं- उदाहरण के लिये कबीर और गुरु नानक। वे आत्मज्ञान का काम और निर्देशन छोटी आयु से ही आरम्भ कर देते हैं। उन्हें किसी विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि वे सर्वोच्च मंडलों से इसी काम के लिये आते हैं। जब वे आते हैं तो संसार में आध्यात्मिक ज्योति की बाढ़ आ जाती है और इस काम को आगे बढ़ाने के लिये वे गुरमुख गुरुओं की परम्परा स्थापित कर देते हैं। समय बीतने के साथ-साथ आडंबर तत्त्वज्ञान पर हावी हो जाता है और धीरे-धीरे आध्यात्मिकता पूर्णतया गुप्त हो जाती है।

फिर कोई दूसरा महापुरुष आता है और इस पुरातन से पुरातन विज्ञान को युग की ज़रूरतों के अनुसार ताज़ा करता है। इस तरह से आत्मज्ञान की प्यासी आत्माओं के लिये पुरानी शराब फिर से बँटने लग

जाती है। ऐसे महापुरुष समय-समय पर विभिन्न देशों और लोगों के बीच में प्रकट होते रहते हैं।

2. स्वतः संतों के अतिरिक्त ऐसे संत भी होते हैं जो किसी संत-सत्गुरु के नेतृत्व में पूरी श्रद्धापूर्वक और आध्यात्मिक अनुशासन में रह कर आध्यात्मिक ऊँचाई प्राप्त करते हैं और उन्हें गुरु पद पर काम करने का अधिकार मिल जाता है।

उनकी आध्यात्मिक पृष्ठभूमि पहले से ही भरपूर फल देने लायक होती है और केवल नाममात्र के तौर पर ही वे मौजूदा जन्म में पूर्ण होते दिखाई देते हैं। गुरमुख कई जन्मों से पूर्णता की ओर अग्रसर होते रहते हैं और मौजूदा जीवन में पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।

कहे कबीर हम धुर घर के भेदी लाए हुक्म हजूरी।।

(कबीर साहब कहते हैं कि वे सीधे परमात्मा के घर से उसका हुक्म लेकर आये हैं।)

गुरु नानक के बारे में बतलाते हुए भाई गुरदास कहते हैं :

पहिलां बाबे पाइआ बख़्श दर पिछों दे फिरि घाल कमाई ।।

(पहले उन्हें अधिकार मिला और तब उन्होंने यह काम किया।)

संक्षेप में पहली प्रकार के संत तो अधिकार लेकर आये और दूसरों ने यहाँ पर रहकर अधिकार प्राप्त किया लेकिन उन दोनों की महानता में, उनके कार्य की किस्म और क्षेत्र में तथा काम करने की विधि में कोई अंतर नहीं होता। इनमें से हर एक को समान अधिकार प्राप्त होते हैं और वह प्रभु की योजना पर समय और लोगों की आवश्यकता के अनुसार अमल करता है लेकिन बाकी जो इस अवस्था का दम भरते हैं और दंभ से गुरु बनते हैं, वे न केवल अपने आप को ठगते हैं बल्कि

जनता को भी कुमार्ग पर डालते हैं। इस श्रेणी में वे आते हैं जो या तो स्वार्थी और लालची होते हैं या फिर नाम और प्रसिद्धि के पीछे हैं। अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये वे सीधे-सादे सत् के जिज्ञासु लोगों को विभिन्न तरीकों से ठगते हैं।

इसी छल-कपट के कारण गुरु पद को लोग घृणा की दृष्टि से देखने लगे हैं और इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि लोग आध्यात्मिक विज्ञान को 'मृगतृष्णा' या 'मूर्खों का स्वर्ग' कह कर इस की आलोचना करते हैं।

अध्याय 4

गुरु : एक या अनेक

'शब्द' सारे संसार का एक मात्र गुरु है और सुरत (व्यक्तिगत चेतना) एक मात्र शिष्य है क्योंकि सुरत शब्द के बिना नहीं रह सकती। वास्तव में, यहाँ एकता का सिद्धांत लागू होता है क्योंकि प्रभु एक है, यद्यपि उसने स्वयं को अनेक रूपों में प्रकट किया हुआ है।

लेकिन ज्यों ही हम दूसरी तरफ देखते हैं और विभिन्न रूपों से भरे संसार की तरफ मुड़ते हैं तो हमें एक ध्रुव तारा दिखाई देता है जो स्वर्ग की ज्योति से जगमगा रहा होता है।

ऐसा पवित्र इंसान, जिसे जिज्ञासुओं को आध्यात्मिक निर्देश देने का अधिकार मिला होता है, 'शब्द' का ही रूप होता है क्योंकि वह स्वयं 'सदेह शब्द' होता है और 'शब्द' का व्यापारी होने के कारण वह खुले दिल से जिसे चाहे उसे बाँटता है।

कबीर साहब अपने बारे में कहते हैं :

कहे कबीर हम धुर घर के भेदी लाए हुक्म हजूरी।।

जब गुरु नानक वेईं नदी (अंतर में अमृत की धारा) पर गहन ध्यान में थे तो उन्हें भी आध्यात्मिक निर्देश देने के ऐसे ही अधिकार प्राप्त हुए थे।

वे दोनों ही परम संत-सत्गुरु थे। कबीर साहब बनारस के पास लहरतला तालाब के किनारे सन् 1398 में प्रकट हुए और सन् 1518 में ज्योति-ज्योत समाये। गुरु नानक तलवंडी में सन् 1469 में प्रकट हुए और 1539 ई. में करतारपुर में उन्होंने समाधि ली। इस प्रकार वे दोनों लगभग 49 वर्ष (1469 ई. से 1518 ई. तक) समकालीन रहे। इसी तरह शम्स तबरेज़ और मौलाना रूम कुछ समय के लिये समकालीन रहे।

फिर गुरु अगंद देव व दादू साहब 1504 ई. से 1552 ई. तक समकालीन रहे। इसी तरह गुरु अर्जुन देव और धर्मदास 1561 ई. से 1606 ई. तक समकालीन रहे।

इन उदाहरणों से प्रतीत होता है कि एक समय में एक से अधिक गुरु हो सकते हैं लेकिन आध्यात्मिक पूर्णता के लिये एक व्यक्ति एक से अधिक गुरु नहीं रख सकता। अगर दीक्षा देने के पश्चात् गुरु ज्योति-ज्योत समा जाए तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता।

एक बार जब वह दीक्षा दे देता है तो सत्गुरु का सूक्ष्म (नूरी) स्वरूप शिष्य के अंदर हो बैठता है और तभी से वह शिष्य का आदर्श हो जाता है और उसके निर्देश धीरे-धीरे फल लाने लग पड़ते हैं।

पृथ्वी पर ऐसी कोई शक्ति नहीं जो संत-सत्गुरु द्वारा बीजे नाम के बीज को निष्फल कर सके। सत्गुरु कभी नहीं मरता। वह अन्य लोगों की तरह शरीर तो छोड़ सकता है लेकिन वह इस शरीर के अतिरिक्त कुछ और भी होता है। वह आदर्श होता है, एक जीवित नाद-ध्वनि होता है या जीवन तत्त्व होता है जिससे सारे संसार को जीवन और प्रकाश मिलता है।

उसके ज्योति-ज्योत समाने के बाद जो गुरमुख गुरु पद का कार्य देख रहा होता है, उसके सत्संग से लाभ उठाया जा सकता है और किसी कठिनाई के समय उस की सलाह ली जा सकती है।

सत्गुरु के प्रति श्रद्धा यही चाहती है कि जो आत्माएँ नामदान की दीक्षा ले चुकी हैं, वे सत्गुरु के नेतृत्व और आध्यात्मिक निर्देश देने की समर्था को पहचानें, चाहे वह भौतिक जगत को छोड़कर आध्यात्मिक मंडलों में ही कार्य कर रहा हो।

अध्याय 5

वक्त का गुरु

समय का गुरु वह जीवित महापुरुष होता है जो अपने अनुयायियों को आध्यात्मिक हिदायतें देता है। बीते समय के सारे गुरु गुज़रे हुए या पुरातन गुरु कहलाते हैं। उनमें से प्रत्येक को अपना लक्ष्य पूरा करना था। पुरातन गुरुओं की शिक्षाएं बंजर ज़मीन में हल जोतने के समान हमारे अंदर पराविद्या के लिए रुचि उत्पन्न करती हैं। उन में से हर कोई जीवित गुरु की आवश्यकता पर ज़ोर देता है और अपने आध्यात्मिक अनुभवों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है। उनके उपदेशों से हमें इस तलाश में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है। हमारी अंतरीय चाह बलवती हो जाती है और हम प्रभु की ओर मार्गदर्शन करने वाले महापुरुष की तलाश करने के लिए मजबूर हो जाते हैं।

वास्तव में आध्यात्मिक निर्देश देने और मार्गदर्शन करने का कार्य जीवित सत्गुरु द्वारा ही किया जाता है। वह प्रभु से जुड़ा रहता है और जीवों को अपने जीवन का दान देता है। आध्यात्मिकता न तो खरीदी जा सकती है और न ही सिखाई जा सकती है, उसे तो किसी संत-सत्गुरु से, जिसमें वह प्रभु-सत्ता प्रकट रहती है, छूत की बीमारी की तरह पकड़ा जा सकता है। जैसे ज्योति से ज्योति जलती है, इसी प्रकार जीवन से जीवन मिलता है और एक आत्मा, जो शरीर के बंधनों में कैद है, वह किसी ऐसी महान आत्मा द्वारा ही, जो स्वयं मन-माया की कैद से आजाद हो चुकी हो, मुक्त कराई जा सकती है। केवल यही एक रास्ता है रूहानी ट्रेनिंग का, दूसरा कोई ढंग नहीं।

जीवित सत्गुरु के बिना आत्मा की मुक्ति का कोई और ढंग नहीं है।

मौलाना रूम इस लिये ज़ोर देकर यह उद्घोषित करते हैं :

मगिसल अज़ पैगम्बरे अय्यामे रव्वेश।
तकिया कम कुन बर तन व बर कामे रव्वेश।

(अपनी चतुराई पर विश्वास मत करो। जीवित संत-सत्गुरु के भरोसेमंद सहारे को कभी मत छोड़ो।)

हज़रत मुहम्मद साहब भी फरमाते हैं :

जो व्यक्ति वक्त के इमाम (जीवित सत्गुरु), अल्लाह के प्रतिनिधि (पैगंबर), पूर्ण मार्गदर्शक के पास पूरी ईमानदारी के साथ नहीं पहुँचता, उसे कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता।

दोबारा फिर हज़रत मौलाना रूम साहब फरमाते हैं :

दर खुदाए मूसा ओ मूसा गरेज़,
आबे ईमां राबफ़र औनी मरेज़।

(मूसा या सत्गुरु की कृपा द्वारा परमात्मा से संबंध स्थापित करो और केवल मात्र अहंकार के पानी में व्यर्थ ही बहते मत जाओ।)

जीवित सत्गुरु की गैरहाजरी के कारण व्यक्ति भक्तिभाव का विकास नहीं कर सकता जो आध्यात्मिक मार्ग के लिए अत्यंत आवश्यक है। जिस व्यक्ति या चीज़ को हमने कभी देखा नहीं, जिसके बारे में हमें कोई अंदाजा नहीं, उसके लिये कोई प्रेम या मोह हो ही नहीं सकता। स्वयं 'मोह' शब्द दर्शाता है कि कोई वस्तु है जिससे 'मोह' हो सकता है।

कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि जीवित सत्गुरु के पास जाने की यह ज़रूरत जिस पर गुरवाणी में बहुत जोर दिया गया है, सिक्खों के दस गुरुओं तक ही लागू होती है परंतु ऐसी बात नहीं है। सत्गुरुओं की

शिक्षाएँ सारी मानव जाति के लिए थीं और सब ज़मानों के लिये थीं। उनका संबोधन सार्वभौमिक था, किसी वर्ग विशेष या समय विशेष के लिए नहीं था।

परथाइ साखी महा पुरख बोलदे साझी सगल जहानै। (647)

(महापुरुषों की शिक्षाएँ सभी इंसानों के लिये एक समान होती हैं।)

बाणी गुरु गुरु है बाणी विचि बाणी अंमृतु सारे।।
गुरुबाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरु निसतारे।। (982)

('बाणी', 'शब्द' अथवा 'अंतरीय ध्वनि' ही गुरु है और गुरु 'बाणी' का देह रूप होता है और अमृत बाणी से ही निकलता है। जो गुरवाणी का कहना मानता है, वह जीवित सत्गुरु की कृपा से मुक्त हो सकता है।)*

इस संदर्भ में भाई गुरदास जी फरमाते हैं :

वेद ग्रंथ गुरु हट हैं, जित लग भौजल पार उतारा।।
सतिगुर बाझ न बुझीऐ, जिच्चर धरे न गुर अवतारा।।

(वेद आदि धार्मिक ग्रंथ सत्गुरु की दुकान की चीजें हैं जो भवसागर से पार उतारने के काम में सहायता करती हैं परंतु सच्चे गुरु के बिना, जो सत्लोक से उतर कर आता है और हमारे बीच निवास करता है, इस सत् का अनुभव नहीं किया जा सकता।)

आध्यात्मिक रहस्यों का लिख कर पूरा वर्णन नहीं हो सकता क्योंकि अंतरीय रास्ते की अपनी ही रुकावटें और कठिनाइयाँ होती हैं।

---

*'गुरुवाणी' और 'बाणी' में बहुत अंतर है। पहले शब्द (गुरवाणी) से तात्पर्य गुरुओं के उन कथनों से है जो पवित्र धर्मग्रंथों (विशेष कर गुरु ग्रंथ साहब) में दर्ज हैं जबकि दूसरे शब्द (बाणी) से तात्पर्य उस अमर 'शब्द-धारा' से है जिसे कभी 'गुरु की वाणी' कहा जाता है और जो सारी सृष्टि में गुंजायमान है। यह परमात्मा में से निकलती है और केवल वही शरीर धारण करके उसका अनुभव दे सकता है। वाणी ('नाम' या 'शब्द') चारों युगों में बजती रही है और सत् का संदेश देती आई है।

कई तरीकों से सत्गुरु अपने सूक्ष्म ज्योति स्वरूप में अंतरीय यात्रा में एक मंडल से दूसरे मंडल तक जाने में आत्मा की सहायता करता है। पुरातन सत्गुरुओं द्वारा अंतरीय व बाहरी सहायता व मार्गदर्शन का यह काम नहीं हो सकता।

अनामी और अरूप 'शब्द', नाम और रूप धारण करता है और हमारे बीच निवास करता है। पवित्र बाइबल में हमें निम्न कथन मिलता है :

'शब्द' सदेह हुआ और हमारे दरमियान आकर रहा।

जब तक प्रभु किसी इंसानी चोले में आकर हमारे बीच न रहे, हम उसे जान नहीं सकते। धर्मग्रंथों के उपदेश तब तक पुरातन और कलात्मक वाक्यावली के भारी बोझे से दब कर सीलबंद रहते हैं, जब तक कोई अनुभवी महापुरुष अपने आध्यात्मिक अनुभवों तथा आत्मविद्या के आधार पर इन धर्मग्रंथों का असली अर्थ हमें न समझाए।

पुरातन महापुरुषों की साधारण प्रतीत होने वाली शिक्षाओं का हमें तब तक सही भाव समझ नहीं आता जब तक कोई अनुभवी महापुरुष आकर हमें उनकी असली महत्ता न बतलाये और हमें वही अनुभव प्रदान न करे, जो धर्मग्रथों में वर्णित है।

अपना जीवनदान देकर वह आत्मा को जीवन्त करता है जो कि असहाय होकर शरीर में मन और माया के बोझ के नीचे दबी पड़ी है। चतुर मार्गदर्शक की तरह वह अपने ही ढंग से आत्मा को नई दिशा प्रदान करता है।

तब वह उस आत्मा को नये-नये आश्चर्यजनक दृश्यों से भरे दिव्य मंडलों में ले जाता है, उसके लिये 'शब्द-रूपी' जहाज का प्रबंध करता है और उस आत्मा को उस जहाज में बिठा कर स्वयं उसे प्रभु की ओर

ले चलता है। प्रतिदिन वह आत्मा को दुर्गम घाटियों का अवर्णीय आनंद का अनुभव प्रदान करता है।

यह सब कुछ, बल्कि इससे भी अधिक जीवित सत्गुरु को काम करना होता है।

सिक्ख मत के इतिहास में हम पाते हैं कि ग्रंथ साहब का संग्रह पहली बार पंचम गुरु, गुरु अर्जुनदेव जी ने किया। बहुचर्चित व प्रसिद्ध कहावत कि 'बाणी गुरु गुरु है बाणी' (जिसका अर्थ माना जाता है कि आगे गुरुओं की ज़रूरत नहीं), के बावजूद आगे आए सिक्ख गुरुओं ने लोगों को सत् के साथ जोड़ने का काम जारी रखा और आज भी खालसा (पवित्र आत्मा) को जिसके अंदर पूर्ण ज्योति जगती है, सत् के जिज्ञासुओं को आध्यात्मिक निर्देश देने और अनुभव प्रदान करने का अधिकार प्राप्त है।

गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि हम सभी जागती ज्योति के उपासक हैं। खालसा के बारे में वे फरमाते हैं :

पूरण जोत जगै घट में, तब खालस ताहि निखालस जानो।।

आगे वे फरमाते हैं :

खालसा मेरो रूप है खास। खालसा में हौं करऊं निवास।।
खालसा मेरी जान की जान। खालसा मेरो प्रान के प्रान ।।
खालसा मेरो संजम सूरा। खालसा मेरो सत्गुरु पूरा।।
या में रंच न मिथ्या भाखी। पारबह्म गुरु नानक साखी।।

अध्याय 6

गुरु की आवश्यकता

निराकार परमात्मा 'शब्द' या 'नाम' के रूप में सारे विश्व में समाया हुआ है परंतु हम तब तक सुखी नहीं हो सकते जब तक अपने अंतर में उसका अनुभव न पाएँ ।

जैसे बिजली सारे वातावरण में परिपूर्ण है लेकिन जब तक व्यक्ति बिजलीघर से जुड़े बिजली के स्विच के पास न आये, तब तक वह उसका लाभ नहीं उठा सकता ।

जब एक बार यह संबंध स्थापित हो जाता है तो बिजली हमें प्रकाश देती है, गर्म या ठंडी हवा, जैसी हम चाहें, देती है और अनंत तरीकों से हमारे घर की सफाई में, खाना पकाने में और इसी तरह से अन्य कामों में हमारी सहायता करती है । यह बड़े-बड़े औद्योगिक सामानों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाती है और ऐसे-ऐसे काम करती है जो हज़ारों व्यक्ति मिल कर भी नहीं कर सकते ।

ठीक इसी तरह से जब आदमी किसी ऐसे मानवीय पोल तक पहुँच पाये, जहाँ परमात्मा की पावर 'शब्द' के रूप में प्रकट हो तो वह व्यक्ति वास्तव में धन्य हो सकता है और रूहानियत की भरपूर फसल प्राप्त कर सकता है । संत, अवतार, पैगम्बर तथा सत्गुरु ऐसे ही मानवीय पोल होते हैं जिनसे प्रभु की ज्योति, जीवन तथा प्रेम प्रसारित होता है।

वे परमात्मा के ज्योति-पुत्र होते हैं और अंधकार में भटकते संसार को ज्योति देने के लिये आते हैं । वे शब्द सदेह होते हैं या दूसरे शब्दों में, वे संसार में चलते-फिरते प्रभु होते हैं ।

प्रभु के प्यारे पवित्र व्यक्ति वही कुछ बोलते हैं जो कुछ प्रभु का शब्द उन्हें कहने को प्रेरित करता है। - पीटर द्वितीय 1:21 (बाइबल)

प्रभु की आत्मा मेरे द्वारा बोली और उसका शब्द मेरी जिह्वा पर था।
- सेमुअल द्वितीय 23:2 (बाइबल)

आपके वचन मेरे पैरों के लिये दीया और मेरे रास्ते के लिये प्रकाश हैं। *- भजन संहिता 119:105 (बाइबल)*

अत: सत्गुरु या सत् का गुरु वह पोल होता है जिसके द्वारा प्रभु की सत्ता अपनी इच्छा के अनुसार संसार में कार्य करती है। उस महान अज्ञेय, अगोचर प्रभु का सबसे सूक्ष्म रूप 'शब्द' ही है। किसी सत्स्वरूप महापुरुष के द्वारा ही 'शब्द' के साथ सम्पर्क स्थापित करना सम्भव होता है।

स्थूल से ही हम सूक्ष्म की तरफ जाते हैं। 'सत्गुरु' और उसका 'शब्द' ही लक्ष्य तक पहुँचने के साधन हैं। केवल वे ही आत्मा को प्रभु की तरफ ले जा सकते हैं। हमारे लिये सत्गुरु प्रभु के रहस्य को हल कर देता है और हमें मन और माया के बंधनों से मुक्त कर देता है।

उसके लम्बे मजबूत हाथ आत्मा को तन-मन की जकड़ों से बाहर निकालते हैं और उसे 'शब्द' से जोड़ कर चेतनता से भर देते हैं।

वह 'ज्योतिर्मय संगीत' (शब्द) आत्मा को उस स्रोत या मंडल की ओर ले जाता है जहाँ से वह आ रहा होता है। सत्गुरु और 'शब्द' दो अलग-अलग वस्तुएं नहीं हैं बल्कि एक ही वस्तु के दो पक्ष हैं।

क्योंकि गुरु स्थूल मंडल में कार्य करता है, उसे स्थूल शरीर ग्रहण करना पड़ता है जिसके बिना आध्यात्मिक निर्देश नहीं दिए जा सकते। लेकिन ज्यों ही वह मानवीय आत्मा को विभिन्न आवरणों में से बाहर निकालता है, वह स्वयं भी सूक्ष्म रूप धारण कर लेता है- जो ज्योतिर्मय और चमकीला होता है।

जब तक मानवीय आत्मा सत्गुरु से एकमेक न हो जाये, यह क्रिया चलती रहती है। यही वह महान उद्देश्य है जिसे पूरा करने के लिये संत-सत्गुरु इस सबसे निचले मंडल में आते हैं, जो कि अनगिनत कष्टों और दुखों से भरा हुआ है। सत्गुरु शब्द मुजस्सम (सदेह) होता है, वह शब्द जिसे 'Word', 'नाद', 'वाणी', 'कलमा' आदि अनेक नामों से संबोधित किया जाता है और जो सच्चा रक्षक है। सत्गुरु उन आत्माओं को बचा लेता है जो वापसी के लिए तैयार होती हैं और वे आत्माएँ उसकी बात मान कर तथा उसके आदेशों का पालन करके अपनी मुक्ति का रास्ता बना लेती हैं।

परमात्मा की सत्ता प्रत्येक स्थान पर मौजूद है, फिर भी हम तब तक उसके विषय में कुछ नहीं जान सकते जब तक कि वह परमात्मा किसी इंसानी चोले में हमारे साथ न रहे।

दूध को मथ कर मक्खन निकाल लेने से और पत्थरों को रगड़ कर आग उन्पन्न कर लेने से ही हम जान सकते हैं कि दूध में मक्खन और पत्थरों में आग छिपी रहती है। इसी तरह 'शब्द' सदेह होकर हमारे बीच निवास करता है जैसा कि पवित्र बाइबल हमें बताती है।

जब आत्मा इस भौतिक जगत में अपने लंबे बनवास से दुखी हो उठती है और उसे काल द्वारा बनाए गए समय और देश के बंधनों से मुक्त होने का कोई रास्ता नहीं सूझता तो वह दीन होकर अपने घर वापस जाने के लिए पुकार करती है। उसकी दिली पुकार से दीन-दयाल प्रभु में हिलोर उठती है और प्रभु दुखी आत्माओं को उबारने के लिए संत-सत्गुरु की शक्ल में इस संसार में आ जाता है।

जीवित सत्गुरु ही यह काम कर सकता है, दूसरा कोई नहीं। ख़मोशी की आवाज़ (शब्द) के द्वारा ही वह परमात्मा बोलता है। उसका यह बिना लिखा कानून और अनबोली भाषा है।

धर्मग्रंथ कितने ही पवित्र और प्रामाणिक क्यों न हों, उनमें केवल आत्मिक मंडलों के उद्धरण और लेखकों के अपने अनुभव ही लिखे गए हैं, वास्तव में वे हमें आध्यात्मिक विद्या का निजी अनुभव नहीं दे सकते और न ही आत्म-पथ पर कोई मार्गदर्शन कर सकते हैं।

सत्गुरु का 'शब्द' आध्यात्मिक मंडलों के लिये एक कुंजी का कार्य करता है। उसके पास वह चाबी होती है जो परमात्मा की बादशाहत का ताला खोलती है जो अभी तक हमारे लिये एक खोए हुए प्रदेश के समान है।

क्योंकि उसे अपनी आत्माओं से प्रेम है, इसलिए वह गडरिये (ईसा मसीह के लिए प्रयोग किया गया एक संबोधन) के रूप में आकर इस संसार के दुख झेलता हुआ जहाँ-तहाँ खोई आत्माओं (भेड़ों) को इकट्ठा करता फिरता है।

मैं संसार की ज्योति हूँ। जो मेरा अनुसरण करेगा, उसे अंधकार में नहीं चलना पड़ेगा बल्कि उसे जीवनदाता ज्योति की प्राप्ति होगी।

- जान 8:12 (बाइबल)

अध्याय 7

पुरातन संत

आज यदि कोई बीमार है तो वह आयुर्वेद के जन्मदाता, धन्वंतरि जी से जो स्वास्थ्य विज्ञान के पितामह थे, स्वास्थ्य संबंधी सलाह नहीं ले सकता, न कोई मुकद्दमेबाज 'सोलोमन' से अपने मुकद्दमे का निर्णय करा सकता है तथा न ही कोई स्त्री 'एडोनिस' से विवाह करके संतान उत्पन्न कर सकती है।

इसी प्रकार जो संत भूतकाल में समय-समय पर अवतरित हुए और अपने संपर्क में आने वालों को आध्यात्मिक दौलत से लाभान्वित कर गए, वे वर्तमान पीढ़ी के लिये कुछ नहीं कर सकते। हरेक का अपना-अपना कार्यकाल रहा, तत्पश्चात् उन्होंने आध्यात्मिकता के प्रसार-प्रचार का कार्य अपने उत्तराधिकारियों को सौंप दिया। मनुष्य केवल मनुष्य से ही सीख सकता है और प्रभु जीवित संतों के द्वारा ही अपना कार्य पूरा करता है।

निश्चय ही प्रभु कुछ नहीं करेगा परंतु वह अपने गुप्त भेदों को अपने सेवादारों अर्थात् अवतारों के समक्ष प्रकट कर देता है।

-आमोस 3:7 (बाइबल)

कुछ लोग सोचते हैं कि पिछले महात्मा आध्यात्मिक मडलों में निवास करते हैं और वे अब भी जिज्ञासुओं को आध्यात्मिक लाभ दे सकते हैं। आइये हम देखें कि तर्क के सामने यह बात कहाँ तक ठीक उतरती है।

1. हर संत का अपना निश्चित कार्य काल और लक्ष्य होता है। ज्यों ही उसका कार्य पूर्ण होता है, वह इस भौतिक संसार से उसी आध्यात्मिक समुद्र में वापस लौट जाता है जहाँ से कि उसका

उद्गम (आना) हुआ था और आगे का कार्यभार अपने उत्तराधिकारी पर छोड़ जाता है।

2. प्रकृति के नियमानुसार यदि गुज़रे हुए गुरु को अपने अनुयायियों के लिये कुछ करना होता है तो वह भी वह अपने उस उत्तराधिकारी के द्वारा करवाता है जिसे वह अपना कार्यभार सौंप गया हो। इस तरह से उत्तराधिकारी, गुरुभाई होने के नाते इस भौतिक मंडल पर अपने साथी भाइयों की सहायता और मार्गदर्शन करता है।

3. हम अपनी इच्छा से मौत के समय इस स्थूल मंडल को छोड़ कर ही उस सत्गुरु से सम्पर्क कर सकते हैं जिसने हमें दीक्षित करने के बाद स्थूल शरीर को त्याग दिया हो। इस धरती पर जीवित रहते हुए भी उसका नूरी स्वरूप कभी गगन (सूक्ष्म मंडल) से नीचे नहीं उतरता, क्योंकि वह हमेशा ही मानवीय आत्माओं की स्थूल और सूक्ष्म मंडलों के मिलाप स्थान पर प्रतीक्षा करता रहता है।

4. इस आशा और विश्वास से कि पुरातन संत और महात्मा अब भी हमारी सहायता कर सकते हैं, हम अपनी विकृत-विरूप विचारधाराओं, कल्पनाओं और मन की भावनाओं को बहुत अधिक महत्त्व देना आरम्भ कर देते हैं और अपने ही अर्ध-चेतन मन के सुझावों पर काम करने लगते हैं, हम इनके असली महत्त्व को समझ नहीं पाते और ऐसा दृढ़ निश्चय कर लेते हैं कि वे विचार और भावनाएँ अमुक दूसरे पुरातन महापुरुष की ओर से आई हैं।

ये विचार और भावनाएँ हमारे अपने इष्टदेव या अपने पसंद के पूर्ववर्ती सत्गुरु की न होकर किसी अन्य माध्यम से भी उपज सकती है। इस फ़र्क को भी उचित प्रकार से तब तक नहीं आंका जा सकता जब तक कि व्यक्ति को दिव्य-दृष्टि प्राप्त न हो, जिसके द्वारा सफलतापूर्वक मन और प्रकृति (माया) के आवरण को पार किया जा

सकता है और स्पष्टतया देखा और निर्णय किया जा सकता है कि इस प्रकार अंतरीय बुरी इच्छाओं की तरंगें मन में उठकर कैसे उसे प्रभावित करती हैं।

5. उसके अलावा हम संभवत: किसी ऐसे संत के कार्य-कलाप को उचित प्रकार से नहीं समझ सकते, जिसे हम पहले कभी नहीं मिले और न ही उसे देखा तथा हमारे पास कोई ऐसा साधन भी नहीं है जिससे हम अब उसकी कार्यप्रणाली की जाँच कर सकें। इन परिस्थितियों में हम किसी भटकती हुई आत्मा के, तांत्रिक योग के अथवा काल की ताकत के आसानी से शिकार हो सकते हैं क्योंकि अनुभवहीन आत्माओं को धोखे में फँसाने के लिए काल ने अनेक ढंग रच रखे हैं।

6. उदाहरण के तौर पर यदि क्षण भर के लिये यह मान भी लिया जाये कि अब भी पुरातन संत हमें आध्यात्मिक रास्ते पर ले जा सकते हैं और आध्यात्मिक निर्देशों के लिये ज़िंदा सत्गुरु की आवश्यकता नहीं है तो किसी भी समय, भूतकाल या वर्तमान काल में गुरु धारण करने की ज़रूरत ही न रहती क्योंकि ऐसी स्थिति में परमात्मा सीधे ही बिना किसी मसीहा या पैगम्बर के लोगों को ज्ञान दे सकता है।

7. यह तथ्य कि किसी भी समय में कोई संत या महात्मा प्रकट हुआ और उसने लोगों को प्रभु की तरफ जाने में सहायता की , स्वयं इस बात का पक्का स्पष्ट प्रमाण है कि इस युग में भी ऐसे ही एक प्रभु-रूप महापुरुष की आवश्यकता है क्योंकि उसके बिना व्यक्ति प्रभु को नहीं जान सकता और उस की ओर चल नहीं सकता ।

8. प्रभु स्वयं भी इंसानों को इंसान बन कर ही ज्ञान दे कर सकता है क्योंकि केवल मनुष्य ही मनुष्य को ज्ञान दे सकता है। उसे मजबूरन ही मानव-तन का चोला धारण करना पड़ता है- आप उसे जो चाहे कह लो; साधु, संत, पैगम्बर, मसीहा या रसूल। जैसे को तैसा आकर्षित

करता है- यह पक्का नियम है।

साध रूप अपणा तनु धारिआ।। (1005)
हमरो भरता बडो बिबेकी आपे संतु कहावै।। (476)

(प्रभु साधु के रूप में प्रकट होता है, प्रभु संत का स्वरूप बना कर आता है।)

इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि पुरानत संत-सत्गुरु चोला छोड़ गए तथा समाप्त हो गए बल्कि तथ्य यह है कि उन्होंने अमरत्व प्राप्त कर लिया है। स्थूल, सूक्ष्म और कारण मंडलों को पार करने के पश्चात् वे पारब्रह्मांडीय चेतनता के साथ मिल कर उसका रूप बन गये हैं। अपनी सारी आत्मिक उन्नति और भक्ति के होते हुए यदि अब भी उन्हें इस भौतिक मंडल में भटकना होता तो उनकी सारी कमाई का फल क्या होता।

सैद्धांतिक वाद-विवाद में पड़ने से कोई लाभकारी उद्देश्य सिद्ध नहीं होता। यदि ऐसे असली गुरु की तलाश की जाये, जो आध्यात्मिक कला एवं विद्या में निपुण हो और उससे प्रभु को पाने का प्राकृतिक और सरल मार्ग सीखा जाये तो सब कुछ स्पष्ट हो जायेगा।

मौत के समय तक परिणाम की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं। यदि बीज ठीक तरह से बोया जाये और सही ढंग से पानी दिया जाये तो अवश्य अपने जीवनकाल में ही पर्याप्त फल प्राप्त हो जायेगा।

जीवित सत्गुरु पूर्ण अमर आनंद प्रदान कर सकता है। उसके अंदर की उच्चतर चेतनता के साधारण दिव्य स्पर्श से ही व्यक्ति के अंदर आध्यात्मिकता की चेतन्य लहरें उठने लगती हैं; आत्मा अंतर में चढ़ाई करने लगती है और चुम्बक की तरह खिंचाव वाली शब्द-धुन पर सवार होकर मंडल दर मंडल पार करती बढ़ती चली जाती है। इस प्रकार

सत्गुरु के संपर्क में आने वाली आत्मा वास्तव में धन्य है क्योंकि वह सत्गुरु की रक्षा के दायरे में आ जाती है।

यह सामान्य अनुभव का विषय है कि किसी विदेश यात्रा को जाने वाला व्यक्ति अनेक पुस्तकें, डायरेक्ट्रियां आदि देखता है तथा और सूत्रों द्वारा जहाजरानी कंपनियों के बारे में सूचनाएँ एकत्र करता है, समुद्री जहाजों, नौकाओं आदि की सुविधा के बारे में, चढ़ने और उतरने की बंदरगाहों के बारे में, हर नौका और जहाज के रास्ते और समय के बारे में और रास्ते में पड़ने वाले महत्वपूर्ण स्थानों के बारे में और अंत में मंजिल पर जाकर वह कहाँ ठहरेगा आदि के विषय में।

अपनी योजना बनाने के बाद उसे अपनी सरकार से पासपोर्ट लेना पड़ता है जिसके बिना वह अपना देश नहीं छोड़ सकता और जिस देश में उसे जाना है, उस देश की सरकार से भी वहाँ उतरने का वीजा लेता है।

ठीक इसी प्रकार जो व्यक्ति स्थूल मंडल को छोड़ कर किसी आध्यात्मिक मंडल में जाना चाहता है उसे भी किसी समर्थ अधिकारी, परमात्मा के प्रतिनिधि संत जो सभी मंडलों में कार्य करता है, से पासपोर्ट और वहाँ उतरने का वीज़ा लेना होता है।

दीक्षा के समय उसे यह चीज़ मिल जाती है। उसे रास्ते में पड़ने वाले विभिन्न देशों से परिचित कराया जाता है, विभिन्न चिन्हों और संकेतों के विषय में बताया जाता है जिनसे हर स्थान की पहचान और दिशा समझी जा सके और रास्ते में आने वाली कठिनाइयों के बारे में बतलाया जाता है। इस प्रकार वह (सत्गुरु) परलोक के यात्री को आवश्यक पासपोर्ट और वहाँ पहुँचने पर उतरने का वीजा देता है। जीव के अंदर एक बार 'नाम' का बीज बीज दिया जाए तो उसे फलीभूत होना ही होगा और एक दिन उसे प्रभु की बादशाहत में पहुँचना ही होगा, जहाँ से

वह अनंत काल से बिछुड़ा हुआ है। इस प्रकार निजधाम लौटने वाले जीव के रास्ते में इस लोक या परलोक की कोई भी ताकत रुकावट नहीं बन सकती।

इसके बाद सत्गुरु उसे वह सही रास्ता बताता है, जो प्रभु की ओर जाता है। एक पुराने समुद्री नाविक की तरह वह शिष्य की अंतरीय यात्रा की पूरी योजना बनाता है क्योंकि उसके बिना शिष्य अपनी सारी भावभक्ति तथा अनथक प्रयत्नों से भी अपनी मंजिल पर नहीं पहुँच सकता।

प्रभु की तरफ सही कदम उठाना तैयारी की दूसरी अवस्था है जो अज्ञात समुद्र में यात्रा करने के समान है। सत्गुरु स्वयं ही नौका का प्रबन्ध करता है और रास्ते में शिष्य की सुरक्षा का बंदोबस्त करता है। रास्ते के समुद्र में आने वाली बाधाओं, डूबी हुई चट्टानों, भँवरों तथा अन्य खतरों से कैसे बचा जा सकता है, उन सभी के बारे में वह शिष्य को सचेत करता है।

वह यहाँ पर ही बस नहीं करता। दिव्य मंडलों और धरती, दोनों का स्वामी होने के कारण वह प्रतिदिन अपनी इच्छा से विभिन्न आत्मिक मंडलों को पार करता है । सचखंड या मुक़ामे-हक़ उसका सदा का निवास है जहाँ से वह प्रतिदिन पृथ्वीमंडल पर आता है ताकि निम्नतम मंडल की सेवाएँ जो उसे सौंपी गई हैं, उन्हें पूरा कर सके।

वे ऐसे बुद्धिमान होते हैं जो गगन में उड़ते हैं परंतु व्यर्थ नहीं घूमते। दिव्य मंडलों और निजगृह के लिये वे सच्चे होते हैं।

क्योंकि उसे परलोक की यात्रा का व्यक्तिगत ज्ञान और अनुभव होता है, सब से ऊँचे मंडल का वह निवासी होता है और उस यात्रा को वह प्रतिदिन कई-कई बार करता है, अतः संसार से थके-हारे लोगों को वह प्रसन्नता भरी आवाज़ देता है:

मेरे अप्रसन्न भाइयो और बहनो! आप सभी दिव्य मंडलों की बादशाहत और प्रभु की कृपा-भरी उपस्थिति में आओ।

वह न केवल हमारी यात्रा का विवरण तैयार करता है, घर वापस जाने की हमारी यात्रा का आरक्षण करता है और हमें प्रभु की बादशाहत का निजी अनुभव देता है बल्कि इस यात्रा में हमारे साथ रहता है, हमारा पथ-प्रदर्शक बनता है। वह हमारा जहाज भी चलाता है और तब तक चैन से नहीं बैठता जब तक कि हमें प्रभु की गोद में नहीं पहुँचा देता।

उसके द्वारा कही गई मोटी-मोटी बातों की जाँच हम डायरैक्ट्रियों (धर्मग्रंथों) से कर सकते हैं। अगर डायरैक्ट्रियों के बयानात उसकी बातों से मेल खाते हों तो हम साहस बटोर कर उस पर तथा उसकी योग्यता पर विश्वास कर सकते हैं।

धर्मग्रंथ कुछ और नहीं बल्कि ऐसी डायरेक्ट्रियाँ हैं जिनमें उन संतों-महात्माओं के व्यक्तिगत अनुभव दर्ज हैं जिन्होंने भूतकाल में इस मार्ग की यात्रा की और जीवित सत्गुरु अपने प्रवचनों और सत्संगों में उनके संदर्भ इसी लिए देता है क्योंकि हम स्वभाव से ही उन में विश्वास रखते हैं और वह चाहता है कि हमें सबसे सरल रास्ते से ऊपर ले जाए।

धर्मग्रंथों के सावधानीपूर्ण अध्ययन से हम कठिन धरातल को पार कर सकते हैं परंतु मात्र इनके द्वारा ही हम आत्मा को तन-मन के बंधनों से आज़ाद नहीं कर सकते और आगे आध्यात्मिक मंडलों में नहीं पहुँच सकते। सत्गुरु की लंबी और शक्तिशाली भुजाएं ही इस कठिन कार्य को संपन्न कर सकती हैं जिसमें तन मन के अस्तबल की सफाई, आत्मा की सभी सीमाओं और विचारों से मुक्ति, उसे सुरक्षित दिव्य मार्ग पर आगे बढ़ाना और खोये हुए साम्राज्य में पुनः पहुँचाना सम्मिलित हैं।

धुर खसमै का हुकम पइआ विणु सतिगुर चेतिआ न जाइ।।(556)

भाई गुरदास फरमाते हैं :

पूछत हहि पथिक केते मारगि न धरे पगि।।
प्रीतम कै देस कैसे बातन से जाईऐ।। (कवित्त-439)

(रास्ते पर बिना चले, सिर्फ प्रश्नों की पूछताछ तुम्हें अपने प्रभु प्रियतम के पास नहीं पहुँचा सकती।)

बुद्धि चाहे कितनी भी तेज़ क्यों न हो, केवल उसके ही सहारे प्रभु को कोई नहीं समझ सकता । कोई उच्चतर चेतनता ही छोटी चेतनता को बड़ी चेतनता से जोड़ सकती है क्योंकि वह दोनों के बीच की कड़ी होती है।

आपण लीआ जे मिलै विछुड़ि किउ रोवंनि।।
साधू संगु परापते नानक रंग माणंनि।। (139)

(यदि कोई अपने आप अकेला ही प्रभु तक पहुँच सकता होता तो विरह का दर्द क्यों होता? ऐ नानक! उस प्रभु को किसी साधु के द्वारा मिलो और उसका आनंद प्राप्त करो।)

वसतु कहीं ढूंढे कहीं, केही विध आवै हाथ।
कहे कबीर तब पाईये, जो भेदी लीजे साथ।।

भेदी लीया साथ कर, दीनी वसतु लखाय।
कोटि जनम का पंथ था, पल महि पहुँचा जाय।।

हमें कदम-कदम पर किसी मार्गदर्शक की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरण के लिये रसोई विद्या के शिक्षार्थी को यह कला किसी रसोई विद्या के अनुभवी से सीखनी होती है। मैडिकल के विद्यार्थी को किसी मैडीसन के प्राध्यापक की सहायता की आवश्यकता होती है।

चीड़-फाड़ के शिक्षार्थी को यह कला किसी प्रसिद्ध सर्जन से सीखनी पड़ती है और इसी तरह से इंजीनियरिंग, चित्रकला आदि के क्षेत्र में भी ज़िंदा शिक्षक की ज़रूरत होती है। मात्र इन विषयों की पुस्तकें और ग्रंथ किसी विद्यार्थी को इन विषयों में निपुण नहीं बना सकते।

इन सभी क्षेत्रों में किसी निपुण अध्यापक की देख रेख में पाया गया व्यवहारिक अनुभव ही महत्त्वपूर्ण होता है।

जब अपराविद्या के सब विज्ञानों को सीखने के लिए, जो इंद्रियों के स्तर पर सीखे जाते हैं, हमें किसी न किसी अध्यापक की ज़रूरत पड़ती है तो आध्यात्मिक विज्ञान या पराविद्या के क्षेत्र में अध्यापक की आवश्यकता और भी अधिक पड़ेगी क्योंकि यह इंद्रियों के घाट से बहुत ऊपर अंतर का ज्ञान है जिसका अध्ययन मन की गहराइयों में और आत्मा की प्रयोगशाला में किया जाता है।

यह विज्ञान युगों-युगों से ताले में बंद पड़ा है और गहरे अंधकार में लिपटा हुआ है जिस तक कोई पहुँच दिखाई नहीं पड़ती। तथ्य यह है कि जो व्यक्ति सत्गुरु की आवश्यकता को नहीं समझता और सत् को स्वयं ही पाना चाहता है, वह वास्तव में उसे पाना ही नहीं चाहता। उसका मामला उस आदमी के समान है जो अपने लिये कुँआ खोदना तो पसंद करता है परंतु निकट बहते ठंडे और ताज़े पानी के झरने पर प्यास बुझाना पसंद नहीं करता जहाँ कि पानी पिलाने वाला भी उसकी सेवा के लिये तैयार बैठा है।

इस संदर्भ में भाई नंदलाल फरमाते हैं :

क़दरे लाले ऊ बजुज़ आशिक़ न दानद हेच कस।
कीमते याकूत दानद चश्मे गौहर बारे मा।

(हीरे जवाहरात की कीमत को कोई उस का आशिक ही जान

सकता है, किसी जौहरी की आँख ही उसकी कीमत आँक सकती है।)

इस मार्ग पर चलने के लिए सत्गुरु शत प्रतिशत ज़रूरी है और इस नियम में कोई ढील नहीं हो सकती। उदाहरण के लिये, कल्पना करो कि कोई व्यक्ति आसमान की सैर का आनंद उठाना चाहता है। पहले तो उसे हवाई-जहाज में कोई प्रवेश की अनुमति नहीं देगा। अगर वह चोरी-छिपे अंदर प्रवेश कर भी लेता है तो उसे जहाज के इंजन की मशीनरी तालाबंद मिलेगी। अगर किसी तरह से वह इस बाधा को भी पार कर जाता है तो उसे यह पता ही नहीं होगा कि मशीनरी के विभिन्न भागों को कैसे प्रयोग करे। यदि वह ऐसी दुस्साहसपूर्ण कार्यवाई कर बैठे और जहाज चल पड़े तो प्रशिक्षण के अभाव में वह उसे ऊपर नहीं ले जा सकता, न ही उसे नीचे उतार सकता है और न ही ठीक तरह से उड़ा सकता है। परिणामस्वरूप, जल्दी या देरी से, दुर्घटना होगी और जीवन की हानि होगी। मानव तन की मशीनरी किसी अन्य मशीन से कहीं अधिक जटिल एवं कोमल है, इसी लिये आत्म-विश्लेषण की विधि में सफलता के लिये, प्रभु तक पहुँचने के लिये और दिव्य इच्छा को समझने के लिये आध्यात्मिक गुरु की आवश्यकता और भी अधिक है।

शरीर में कैद आत्मा स्वयं को इस शरीर से अलग नहीं कर सकती। दो आँखों के बीच और ऊपर आत्मा का ठिकाना है जहाँ से यह सारे शरीर में फैली रहती है और दोनों (शरीर और आत्मा) एक दूसरे में घुल मिल गए हैं। यदि कुछ क्षण के लिये वह अपने आप को आज़ाद कर सके और अपने केन्द्र पर इकट्ठी हो जाए तो भी यह 'शब्द' के जहाज़ में प्रवेश नहीं कर सकती। यदि यह उस 'शब्द' के जहाज़ में प्रवेश कर भी जाये तो इसे यह पता नहीं चलेगा कि कहाँ जाना है, कैसे जाना है और कैसे वापस आना है।

परंतु यदि सत्गुरु-रूपी जहाज़-चालक (पाइलट) आत्मा को अपने साथ ले जाने आ जाये, दोनों मिल कर जहाज़ में प्रवेश करें और आत्मिक मंडलों में एक साथ उड़ान भरें तो आत्मा खुद जहाज को उड़ाना भी सीख सकती है और बाद में अपने आप आत्मिक उड़ानों का आनंद उठा सकती है।

मानव तन की मशीनरी (इंसान तीन शरीर रखता है: स्थूल, सूक्ष्म और कारण तथा उनके अंदर जीवात्मा छुपी है) का ज्ञाता होने के कारण वह दिव्य मंडलों की प्रतिदिन यात्रा करता रहता है, इसलिए वह किसी भी जीवात्मा को आसानी से आत्मिक ज्ञान के रहस्यों की दीक्षा और प्रैक्टीकल अनुभव देकर शरीर की कैद से बाहर निकलने का रास्ता बता सकता है।

सत्गुरु व्यवहारिक मार्गदर्शन और सहायता द्वारा आत्मा को मंडल दर मंडल सुरक्षित ले चलता है और उसे रास्ते के खतरनाक चिन्हों और निशानों, तीखे मोड़ों और अज्ञात आत्मिक खतरों से भी चौकन्ना करता जाता है। आत्म विज्ञान और कला के ज्ञाता सत्गुरु की छत्रछाया में आने वाली आत्मा वास्तव में भाग्यशाली और धन्य होती है।

इसे इंसान का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा अगर वह गुरु की भेंट को छोड़ कर अपने आप ही बिना गुरु के मार्गदर्शन के, रूहानी यात्रा करने की कोशिश करने लग जाए।

इसी लिये मौलाना रूम बड़े स्पष्ट शब्दों में ऐसी यात्रा के बारे में चेतावनी देते हैं :

पीर रा बगुजीं कि बे पीर ई सफ़र।
हस्त बस पुर आफ़तो खौफ़ो ख़तर।

(किसी मुर्शिदे-क़ामिल, संत-सत्गुरु की तलाश करो क्योंकि

उसकी सहायता और मार्गदर्शन के बिना यह यात्रा अकह खतरों और कष्टों से भरी है।)

वास्तव में 'नाम' या 'धुनात्मक शब्द' एक अनलिखा कानून है, एक अनबोली भाषा है और इसलिये यह धर्मग्रंथों या अन्य पुस्तकों से प्राप्त नहीं हो सकता । यह दौलत केवल 'नाम' के किसी निपुण ज्ञाता से ही प्राप्त की जा सकती है क्योंकि वह 'शब्द-सदेह' होता है। केवल वही आत्मा को नाम से जोड़ सकता है, दूसरा कोई नहीं।

बिनु सतिगुर को नाउ न पाए प्रभि ऐसी बणत बणाई हे।। (1046)

(यह परमात्मा का मूलभूत सिद्धांत है कि सत्गुरु के बिना कोई दूसरा 'नाम' का अनुभव प्रदान नहीं कर सकता।)

गुर का सबदु गुर थै टिकै होर थै परगटु न होइ।। (1249)

(किसी संत-सत्गुरु का 'शब्द' उसी की कृपा से सुना जा सकता है, कोई दूसरा उसको प्रकट नहीं कर सकता।)

सत्गुरु परमार्थ के सभी रहस्यों से जानकार होता है। इस लिये उसकी गवाही पक्की होती है और उसके प्रभु-प्रेरित शब्द दिल पर असर करते हैं।

संतन की सुणि साची साखी।। सो बोलहि जो पेखहि आखी।।
(894)

(संतों की सच्ची 'बाणी' को सुनो क्योंकि जो कुछ वे कहते हैं, अपने अनुभव के आधार पर कहते हैं।)

गुरवाणी में संत-सत्गुरु की आवश्यकता पर बहुत ज़ोर दिया गया है। जीवात्माएँ युगों-युगों से इंद्रियों के घाट की ज़िंदगी जीअ रही हैं और उन्हें यह पता ही नहीं लगता कि तसवीर का दूसरा पहलू भी है।

'सत्' का अनुभव किसी संत-सत्गुरु की कृपा के बिना कभी हो नहीं सकता।

बिनु सतिगुरु किनै न पाइओ बिनु सतिगुर किनै न पाइआ।।
सतिगुर विचि आपु रखिओनु करि परगटु आखि सुणाइआ।।
(466)

(बिना सत्गुरु के किसी ने कभी भी भूतकाल या वर्तमान काल में 'सत्' को नहीं पाया। 'नाम' की मणि सत्गुरु के समर्थ हाथों में सौंपी गई है और सिर्फ वही अन्य जीवों के अंदर उसे प्रकट कर सकता है।)

नदरि करहि जे आपणी ता नदरी सतिगुरु पाइआ।।
एहु जीउ बहुते जनम भरंमिआ ता सतिगुरि सबदु सुणाइआ।।
सतिगुर जेवडु दाता को नही सभि सुणिअहु लोक सबाइआ।।
सतिगुरि मिलीऐ सचु पाइऐ सचु पाइआ जिन्ही विचहु आपु गवाइआ।। *(465)*

(प्रभु की कृपा से ही कोई सत्गुरु से मिल सकता है। जीवात्मा जन्म-मरण के चक्र में है और सत्गुरु उसे शब्द से जोड़ देता है। आप सभी ध्यान से सुनो और यह निश्चय करके जान लो कि सत्गुरु जितना महान दाता कोई भी नहीं है क्योंकि वही जीवों को 'नाम' की अमूल्य दौलत भेंट करता है। जो अपने आप को गँवाने के लिए तैयार होते हैं अर्थात् इंद्रियों के घाट से ऊपर आने के लिए तैयार हों, वही किसी सत्गुरु से मिलकर सत् को प्राप्त करेंगे।)

सभी संत एक स्वर से कहते हैं कि बिना सत्गुरु के कोई भी प्रभु तक नहीं पहुँच सकता, उसे पा नहीं सकता। प्रभु ने स्वयं स्पष्ट कहा है:

धुरि खसमै का हुकम पइआ विणु सतिगुर चेतिआ न जाइ।(556)

(प्रभु का यह नियम है कि बिना किसी संत-सत्गुरु की कृपा के कोई उसके बारे में सोच भी नहीं सकता।)

कहु नानक प्रभि इहै जनाई।।
बिनु गुर मुकति न पाईऐ भाई।। (864)

(ऐ नानक! परमात्मा ने यही बताया है कि किसी सत्गुरु की सहायता के बिना कोई मुक्ति को नहीं पा सकता।)

सत्गुरु आँख बख़्शने वाला डॉक्टर होता है। हम सभी बिल्कुल अंधे हैं। प्रभु हमारे अंदर है और हम उसके लिए बाहर भटकते फिरते हैं। परंतु सत्गुरु से भेंट होने के बाद हमें खोई हुई अंतरदृष्टि मिल जाती है और हम अपने शरीर की प्रयोगशाला में प्रभु का अनुभव करने लग जाते हैं।

इहु जगु अंधा सभु अंध कमावै बिनु गुर मगु न पाए।।
नानक सतिगुरु मिलै त अखी वेखै घरै अंदरि सचु पाए।।
(603)

(सभी अंधे हैं और अंधे कामों में लगे रहते हैं, उन्हें इस से बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं मिलता। ऐ नानक! जब जीवात्मा किसी सत्गुरु से मिलती है तो वह प्रभु की ज्योति को देखने लग जाती है और आत्मा की गहराइयों में उसे अनुभव होने लगता है।)

हम असल में अंधे हैं क्योंकि हम शारीरिक नेत्रों के होते हुए भी उस प्रभु को नहीं देख पाते। इन शारीरिक आँखों को खोना कोई अंधापन नहीं है परंतु अंधा वास्तव में वह व्यक्ति है जो अंदर छिपे प्रभु का अनुभव नहीं करता है।

अंधे एहि न आखअनि जिन मुखि लोइण नाहि।।
अंधे सेई नानका खसमहु घुथे जाहि।। (954)

(ऐ नानक! जिनके चेहरे पर नेत्र नहीं, वे अंधे नहीं हैं; वास्तव में अंधे वे हैं जो अंतर में प्रभु की ज्योति को नहीं देखते।)

गुरु अर्जुन देव हमें बतलाते हैं :

पेखत चाखत कहीअत अंधा सुनीअत सुनीऐ नाही।।
निकटि वसतु कउ जाणै दूरे पापी पाप कमाही।। (741)

(व्यक्ति अपनी सभी इंद्रियों के होते हुए भी अंधा हो सकता है, यदि वह सोचता है कि प्रभु, जो उसकी आत्मा की आत्मा है, उससे बहुत दूर है और इसलिये वह पाप कर्मों में प्रवृत रहता है।)

शारीरिक आँखों से हम अपने आस-पास के स्थूल जगत को देखते हैं लेकिन हम में से प्रत्येक के अंदर जो शिव-नेत्र या तीसरी आँख है, वह बंद पड़ी है। जब यह तीसरी आँख खुलती है तो हम सूक्ष्म और कारण जगत को देख सकते हैं और इन से भी परे जो निरोल आत्मिक मंडल हैं, उनका अनुभव कर सकते हैं।

अंधा सोइ जि अधुं कमावै तिसु रिदै सिलोचन नाही।। (1289)
(अंधा वह है जो अंधेपन के काम करता है क्योंकि उस की अंतर की आँख बंद है।)

हम सभी इस स्थूल जगत से जुड़े हुए हैं और यह नहीं जानते कि इससे परे कोई और वस्तु भी है।

माइआ मोहि हरि चैते नाही।। जमपुरि बधा दुख सहाही।।
अंना बोला किछु नदरि न आवै मनमुख पापि पचावणिआ।।(111)

हमेशा मन और माया में लिप्त इंसान प्रभु के बारे में सोचता तक नहीं। यमपुरी से बँधा होने की वजह से वह लगातार कष्टों में जीता है। अंधे और बहरे के समान वह इस दुनिया से परे कुछ भी देख-सुन नहीं पाता। वह मन का गुलाम बन कर पापों में डूबा रहता है।)

अपने आप कोशिश करने से किसी के लिये भी उच्चतर दिव्य मंडलों में प्रवेश करना असंभव है। हर जिज्ञासु के लिये किसी ऐसे सिद्ध पुरुष का साथ जरूरी है जो प्रतिदिन अपनी आध्यात्मिक यात्रा से सूर्य और चंद्र मंडल को पार करता हो।

मौलाना रूम फरमाते हैं :

मर्दे हज्जी हमरही हाजी तलब।
ख़्वाह हिन्दू ख़्वाह तुर्क ख़्वाह अरब।।

(जो व्यक्ति हज अर्थात् रूहानी यात्रा पर जाने का इच्छुक हो, वह इस उद्देश्य के लिये किसी अनुभवी हाजी को साथ ले ले, चाहे वह हिंदू हो, तुर्क हो या अरब हो।)

सत्गुरु एक निपुण सर्जन की भाँति हमारी तीसरी आँख खोल सकता है।

शम्स तबरेज़ फरमाते हैं :

गर अयाँ ख्वाहीज़ ख़ाके पाए एशाँ सुरमा साज़।
ज़ आके एशाँ कोरे मादर ज़ाद रा राह बीं कुनंद।

(अगर आप प्रभु को देखना चाहते हो तो किसी महापुरुष के चरणों की धूलि अपने नेत्रों में लगाओ क्योंकि वह जन्म से अंधे लोगों को भी आँख बख़्श सकता है।)

'नाम' या 'शब्द' वह सुरमा है जिसके द्वारा व्यक्ति दिव्य दृश्यों को देखने लग जाता है। इसके बिना व्यक्ति हमेशा के लिये अंधा रहता है और उसका मानव जन्म व्यर्थ चला जाता है।

सबदु न जाणहि से अंने बोले से कितु आए संसारा।। (601)

('शब्द' के बिना व्यक्ति अंधा व बहरा रहता है और मानव जन्म

का कोई लाभ नहीं उठा पाता।)

गुण नानकु बोलै भली बाणि।। तुम होहु सुजाखे लेहु पछाणि।।
(1190)

('वाणी' सबसे बड़ा सहारा है जिससे प्रभु को देखने वाली दृष्टि प्राप्त होती है।)

परमात्मा कण-कण में व्याप्त है लेकिन हम उसे देख नहीं पाते क्योंकि हमारी दृष्टि में दोष है:

है घट में सूझत नहीं, लानत ऐसी जिंद।
तुलसी या संसार को भया मोतियाबिंद।। – *तुलसी साहब*

आँखें हज़ार नियामत हैं। उनके बिना व्यक्ति अंधकार में भटकता रहता है। अंधे व्यक्ति के लिये सारा स्थूल संसार मात्र अंधकार की चादर होता है लेकिन वह कितना शुक्रगुज़ार होगा यदि कोई अनुभवी डॉक्टर उसकी आँखों का ऑप्रेशन करके उसकी दृष्टि को ठीक कर दे।

अंतरीय आँख बाहरी आँखों की अपेक्षा हज़ारों गुणा अधिक उपयोगी है क्योंकि उसके बिना इस भौतिक दुनिया से परे कुछ भी नहीं देखा नहीं जा सकता और इंसान सृष्टि के आदि से, युगों युगों से अंतर-दृष्टि से अंधा होकर भटकता रहता है। सत्गुरु आ कर इस तीसरे नेत्र को, जो बिना प्रयोग में लाए जाने के कारण लगातार सीलबंद पड़ा है, खोल कर ज्योति प्रदान करता है।

क्या यह दुख की बात नहीं कि इतना उपयोगी अंग बिना इस्तेमाल हुए पड़ा रह जाये और हमने यह सोचने का भी समय न निकाला हो कि हमारी इस मौजूदा दयनीय हालत के लिए कौन जिम्मेदार है? ऐसा देहधारी आत्माओं के ऊपर मन और माया के ज़बरदस्त प्रभाव के कारण हुआ है।

केवल इंसान को ही नहीं बल्कि देवताओं को भी तीसरे नेत्र और दिव्य ज्योति की ज़रूरत होती है क्योंकि इसके बिना वे भी अपने आप और अपने वातावरण से परे कुछ नहीं देख सकते, अपनी माता (शक्ति) को भी नहीं।

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु।। (7)

(सारी सृष्टि की उत्पत्ति 'शक्ति' से हुई है जो तीन अलग-अलग देवताओं के द्वारा कार्यरत रहती है। वे हैं : ब्रह्मा—सृष्टिकर्त्ता, विष्णु—पालनकर्त्ता और महेश—संहारकर्त्ता। यद्यपि वे तीनों उस शक्ति के नियंत्रण और निर्देशन में कार्य कर रहे हैं तथापि यह बड़ी आश्चर्यजनक बात है कि वे उस 'शक्ति' को देख नहीं पाते।)

गुसाई तुलसीदास भी बतलाते हैं कि सत्गुरु की कृपा के बिना कोई भी जीवन सागर को सुरक्षित पार नहीं कर सकता।

गुरु बिन भवनिधि तरै न कोई। जो विरंचि शंकर सम होई।।
– *मानस उत्तर कांड 93,3*

(जीवन रूपी भयंकर समुद्र को सत्गुरु की सहायता के बिना कोई भी पार नहीं कर सकता, चाहे वह भगवान शंकर के समान ही बुद्धिमान क्यों न हो।)

जब उन जैसे महान व्यक्तियों को भी गुरु की आवश्यकता होती है तो इस मिट्टी के पुतले (इंसान) को बिना संत-सत्गुरु की सहायता के कोई अन्य चारा ही नहीं हो सकता।

बिनु गुरु दाते कोइ न पाए।। लख कोटी जे करम कमाए।।
(1057)

(चाहे कोई कितने ही श्रेष्ठ व पवित्र कर्म कर ले तो भी बिना गुरु के वह भवसागर से बाहर निकलने का रास्ता नहीं पा सकता।)

पुनः तुलसी साहब फरमाते हैं :

तुलसी बिना करम किसी मुर्शिद रसीदा के,
राहे निजात दूर है उस पार देखना।

(ऐ तुलसी! किसी मुर्शिदे-क़ामिल, पूर्ण सत्गुरु के बिना न तो तुम मुक्ति को प्राप्त कर सकते हो और न ही तुम्हें उसका कोई रास्ता दिखाई दे सकता है।)

गुरवाणी में सत्गुरु की आवश्यकता पर बहुत अधिक ज़ोर दिया गया है :

मत को भरमि भूलै संसारि।। गुरु बिनु कोइ न उतरसि पारि।। (864)

(किसी के भी दिमाग में इस बारे में ज़रा सा भी संदेह नहीं रहना चाहिये कि आज तक भवसागर को गुरु के बिना किसी ने भी पार नहीं किया है।)

संसार एक डरावना सागर है। गुरु का 'शब्द' नौका है और वही उसका मल्लाह भी है। उस की कृपा से ही कोई जीव प्रभु तक पहुँच सकता है, इसके अतिरिक्त दूसरा कोई भी रास्ता नहीं है।

गुरु जहाजु खेवटु गुरु गुर बिनु तरिआ न कोइ।।
गुर प्रसादि प्रभु पाईऐ गुर बिनु मुकति न होइ।। (1401)

(गुरु नाव भी है और खेवने वाला मल्लाह भी और उसके बिना कोई भी भवसागर के पार नहीं जा सकता। प्रभु गुरु कृपा से मिलता है और मुक्ति का रास्ता भी उसी से मिलता है।)

हिंदू धर्मग्रंथों में भी हमें ऐसे अनेक संदर्भ मिलते हैं।

कठोपनिषद् (1 : 2) में आता है:

श्रवणायापि बहुभिर्यो न लभ्यः श्रुण्वन्तोऽपि बहबो यं न विद्यु।
आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धाऽऽचर्योज्ञाता कुशलानुशिष्ठः।

(प्रभु के बारे में सुनने का शुभ अवसर भी बहुत कम लोगों को मिल पाता है, उनसे भी कम लोग उसे जान पाते हैं। वे महात्मा धन्य हैं जो उसके बारे में चर्चा करते हैं तथा वे लोग धन्य हैं जिनकी ऐसे लोगों तक पहुँच है। वास्तव में वे धन्य हैं जो ऐसे महापुरुषों की सहायता और मार्गदर्शन से अपने अंदर प्रभु का साक्षात्कार करते हैं।)

न नरेणावरेण प्रोक्त एव सुविज्ञेयो बहुधा चिंत्यमानः।
अनन्यप्रोक्ते गतिरत्र नास्त्यणीया-ह्यतर्क्यमणु प्रमाणात्।

(मात्र सोच-विचार किसी काम का नहीं। बिना दीक्षा के परमात्मा को कोई नहीं जान सकता। जब तक तुम किसी संत-सत्गुरु से परमात्मा का ज्ञान प्राप्त न करो तुम्हें उसका अनुभव नहीं हो सकता। वह इतना सूक्ष्म है कि विचारों द्वारा वहाँ नहीं पहुँचा जा सकता और बुद्धि भी उसको जान नहीं सकती।)

छंदोग्य उपनिषद् (4:9-3) में हमें निम्न कथन मिलता है :

श्रुतं ह्मोव में भगवद्दृशेभ्य आचार्याद्वैव।
विद्या विदिता साधिष्ठं प्रापयतीति।

(पवित्र पावन महापुरुषों से, जो गुरुओं के समान हैं, हमने यह सुना है कि बिना संत-सत्गुरु के हम न तो आत्मा को जान सकते हैं और न ही उसका अनुभव कर सकते हैं।)

मंडुकोपनिषद (1:2:7,12) में हम पढ़ते हैं :

परीक्ष्य लोकान् कर्म्म चितान् ब्रह्मणो निर्वेदमायान्नासत्यकृतः कृतेन।
तद्विज्ञानार्थ स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रिर्य ब्रहनिष्टम्।

(ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्मज्ञानी का यह कर्तव्य है कि कर्मों के फल की इच्छा से अपने चित्त को हटा कर रखे और वैराग्य की अवस्था धारण करे क्योंकि प्रभु स्वयंभू है और श्रेष्ठ गुणों द्वारा उसे आकर्षित नहीं किया जा सकता। उसको पाने के लिये जीव सच्चा जिज्ञासु बन कर किसी ऐसे गुरु के पास जाये जो ब्रह्मज्ञान में निपुण हो और पूरी तरह से ब्रह्मनिष्ठ हो, ब्रह्म में अभेद हो।)

गुरु के बिना तो व्यक्ति धर्मग्रंथों का सच्चा ज्ञान भी प्राप्त नहीं कर सकता।

श्वेताश्वतरोपनिषद (6:23) में यह कहा गया है :

यस्य देवे परा भक्ति, यथ देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यार्थ प्रकाशन्ते नहात्मनः।।

(जो प्रभु में परम भक्ति रखता है और वैसी ही भक्ति-भावना अपने गुरु में रखता है, ऐसे महात्मा ही को इस उपनिषद के कथन समझ में आएँगे।)

आओ अब मनुस्मृति (अध्याय 2) की ओर ध्यान दें :

शिष्य को चाहिये कि अपने सत्गुरु के सामने सीधा, स्थिर खड़ा रहे और अपने तन और इंद्रियों पर पूरा काबू रखे। - श्लोक 192

शिष्य को चाहिये कि प्रतिदिन दैनिक पाठ आरंभ करने से पहले और उसके पूर्ण होने के पश्चात् गुरु के चरणों में प्रणाम करे और उसकी आज्ञानुसार कार्य करे। - श्लोक 71

जो लोग वेदों को गुरु के बिना सुन-सुनाकर ही सीखना चाहते हैं वे वेद-ज्ञान का निरादर करते हैं क्योंकि गुरु के बिना वेदों को वास्तव में कोई नहीं समझ सकता और जो ऐसा करने की कोशिश करते हैं वे नर्क में जाते हैं। - श्लोक 116

जो आपको सांसारिक ज्ञान (अपराविद्या) या आध्यात्मिक ज्ञान (पराविद्या) देते हैं, वे आपकी श्रद्धा और आदर के पात्र हैं।

- श्लोक 117

भगवद्गीता (4:34) में हमें निम्न कथन मिलता है :

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञान क्षानिनस्तत्त्वदर्शिनः।

(अध्यात्म-विद्या का अभ्यास किसी ऐसे गुरु के चरणों में रह कर ही किया जा सकता है जो सत् का पूर्ण अनुभवी हो क्योंकि केवल वही ठीक तरह मार्गदर्शन दे सकता है।)

किसी सत्गुरु की सहायता के बिना हम आध्यात्मिक मार्ग को नहीं जान सकते और इसी लिये हमारी आध्यात्मिक तलाश, सत्गुरु की तलाश के साथ ही शुरू होनी चाहिये।

पवित्र धर्मग्रंथ (बाइबल) में यह कहा गया है:

मेरी मदद के बिना पिता के पास कोई नहीं जा सकता।

- जान 14:6 (बाइबल)

पुत्र के बिना कोई इंसान नहीं जानता.....कि पिता कौन है, तथा वे लोग जिन्हें पुत्र पिता को प्रकट करे। - लूक 10:22 (बाइबल)

मेरा पिता जिन्हें खींच कर मेरे पास लाता है, उनके अतिरिक्त मेरे पास कोई इंसान नहीं आ सकता। - जान 6:44 (बाइबल)

जो तुम्हारा स्वागत करता है, वह मेरा स्वागत करता है और जो मेरा स्वागत करता है, वह उस प्रभु का स्वागत करता है जिसने मुझे भेजा है। - मत्ती 10:40 (बाइबल)

संक्षेप में, सभी धर्मग्रंथ इसी बात को दोहराते हैं कि इंसान बिना किसी संत-सत्गुरु की कृपा के मुक्ति को नहीं पा सकता :

सासत बेद सिमृति सभि सोधे सभ एका बात पुकारी।।
बिन गुरु मुकति न कोऊ पावै मनि वेखहु करि बीचारी।।(495)

प्रभु को पाने का सबसे सरल और शीघ्रतम रास्ता किसी संत-सत्गुरु की भक्ति है।

हज़रत मुहम्मद साहब ने हज़रत अली को संबोधित करते हुए कहा:

गुफ्त पैगम्बर अली रा काए अली शेरे हक़्क़ी पहलवाने पुर दिली,
लेक बर शैरी मकुन तू आअतमीद-अन्दर आ दर साया एनख़्ले उम्मीद।

या अली अज़्ज़ुमला ताओते राह-बर गुज़ीं तू सायाए ख़ासे अल्लाह,
दस्तगीर ओ बन्दाए ख़ासे अल्लाह-तालिबाँ रा में बुरद ता पेशगाह।

(ऐ अली! तुम सत्य के शेर हो, बहादुर और लगातार कार्यरत रहने वाले हो परंतु अपने बल और ताकत पर ही निर्भर मत रहना। तुम्हारे लिये यह कहीं अधिक बेहतर होगा कि किसी फल-फूलों से लदे पेड़ के नीचे सहारा ले लेना। ऐ अली! उन सभी रास्तों में से, जो प्रभु की तरफ जाते हैं, उसी को चुनना जो प्रभु के प्यारे का हो क्योंकि उसकी भुजा लंबी और ताकतवर होती है और वह आसानी से सत् के खोजियों को अपने पास ला सकता है।)

इसी तरह से मौलाना रूम साहब भी फरमाते हैं :

हेच नकशद नफ़्स रा जुज ज़िल्ले पीर-
दामने आँ नफ्स कुश रा सख्त गीर,
रौ बखुसप अन्दर पनाहे मुकब़ले-
बू कि आज़ादत कुनद साहिब दिले।

फ़ारख्तह साँ रोज़ व शब कुन कू व कू-
गंजे पिनहाँ रा ज़ दुरवेशे बजू,
ता तवानी ज़ औलिया रू बर मताब,
जहद कुन व अल्लाह आलम बिलसवाब।

(बिना गुरु की छत्रछाया के यह मन काबू नहीं आ सकता । अगर तुम्हें कोई ऐसा संत-सत्गुरु मिल जाये तो उसे कस कर पकड़े रहना। जो खुदा की दरगाह में मंजूरे नज़र हो चुका हो, उसकी छत्रछाया में विश्राम करना क्योंकि मुक्त आत्मा की नज़दीकी तुम्हें भी मुक्त कर देगी। किसी दरवेश, खुदा के बन्दे, सत्गुरु से मिल कर गुप्त खज़ाने की तलाश करना और चकवे की तरह दिन-रात तुम उसकी जुदाई में आहें भरना।)

सत्गुरु से बड़ा मित्र कोई नहीं। वह इस लोक व परलोक में, सर्वत्र ही रक्षक है। हमेशा ऐसे सत्गुरु की हर तरफ तलाश करो और जब तक वह मिल न जाये, तब तक चैन से न बैठो।

फकीरों से कभी भी दूर मत जाओ बल्कि दिल लगा कर उन को समझने की कोशिश करो और उनकी असली महानता को पहचानो।

परमार्थ का मार्ग कठिनाइयों और खतरों से भरा है और सत्गुरु के मार्गदर्शन और सहायता के बिना इस पर चला नहीं जा सकता।

हर आत्मा पर तीन शरीरों के गिलाफ चढ़े हुए हैं- स्थूल, सूक्ष्म और कारण। इन के द्वारा आत्मा स्थूल, सूक्ष्म और कारण मंडलों में काम कर सकती है परन्तु उसका अपना असली घर इन तीनों मंडलों से परे है।

स्थूल देश में जीव को फँसाने के लिए अनेकों रुकावटें और मुश्किलें हैं। फिर सूक्ष्म मंडल में मन को लुभाने वाले ऐसे ऐसे सामान हैं जिन में से जीव के लिये बच निकल पाना असंभव है। ऐसे ही कारण

मंडल में जीव के लिये और भी अधिक ललचाने वाले सामान मौजूद हैं। इस लिए आध्यात्मिक मंडलों में अपने आप प्रवेश करना कोई आसान कार्य नहीं। यह रास्ता काँटों से भरा है और उस्तरे की धार जैसा तेज़ व ख़तरनाक है।

दरवाज़ा सीधा है और रास्ता तंग है जो कि जीवन की तरफ ले जाता है। बहुत ही कम लोग उसे पाते हैं। – मत्ती 7:7 (बाइबल)

इस लिये अति आवश्यक है कि सत् का अभिलाषी पहले किसी अनुभवी पूर्ण पुरुष की तलाश करे जो आध्यात्मिक मार्ग का पूर्ण ज्ञाता हो और उससे ज्ञान प्राप्त करके उसकी निगरानी में रह कर साधन अभ्यास करे। परमार्थ में सफल होने का और कोई तरीका नहीं।

कठोपनिषद में आता है :

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत:।

(उठो, जागो और उद्देश्य की प्राप्ति तक मत रुको।)

प्रभु का ज्ञान किसी प्रभु-रूप महापुरुष से मिल सकता है। हर कदम पर जिज्ञासु को सत्गुरु के लंबे और बलवान हाथों की आवश्यकता होती है क्योंकि सिर्फ वे ही उस तक पहुँच सकते हैं, उसे बचा सकते हैं, उसे रास्ते पर लगाये रख सकते हैं और उसका सही प्रकार से मार्गदर्शन कर सकते हैं।

मौलना रूम फरमाते हैं :

पीरा रा बगुज़ीं कि बे पीर ईं सफ़र,
हस्त बस पुर आफ़तो खौफ़ो ख़तर,
हर कि ऊ बे मुर्शिदे दर चाह शुद,
ऊ ज़ गूलाँ गुमराह व दर चाह शुद,

गर न बाशद साआए पीर ऐ फुजूल,
पस तुरी सरगशतह दारद बांगे गूल,
गूलत अज़ राह अफ़गनद अन्दर गज़दं
अजतु वाही तर दरीं राह बस बुदंद,
बांगे गूलां हस्त बाँगे आशना,
आशनाए कू कशद सुए फ़ना।

(पहले किसी पीर, सत् के अनुभवी गुरु की तलाश करो क्योंकि पीर के बिना यह रास्ता खतरों से भरा हुआ है। जो इस रास्ते पर अपने-आप अकेले ही चलने की कोशिश करता है, उसे यकीनन शैतान आध्यात्मिक रास्ते से हटा कर नीचे गिरा देगा।

किसी पीर के बिना तुम वास्तव में इधर-उधर की भटकाने वाली शैतान की आवाज़ों के कारण ठगे जाओगे। पहले भी बहुत सारे अक्लमंदों ने अकेले ही इस रास्ते को पार करने की कोशिश की मगर शैतान की ताकत ने उन्हें गुमराह कर दिया। कई बार शैतान, सत्गुरु की आवाज़ की नकल करके तुम्हें नर्क में खींच कर ले जा सकता है।)

सत्गुरु की प्यार भरी दृष्टि से ही आत्मा इस शरीर के जेलखाने से बाहर आ सकती है। यहाँ से आगे सत्गुरु का दिव्य स्वरूप आत्मा को सीधे अपने नियंत्रण में ले लेता है और अपनी दया से हर कदम पर उसकी रक्षा करता है।

बिखड़े दाउ लंघावै मेरा सतिगुरु सुख सहज सेती घरि जाते।। (1185)

(सत्गुरु की सहायता से इस आध्यात्मिक रास्ते के कठिन मोड़ और रास्ते आसानी से पार कर लिये जाते हैं।)

सूक्ष्म और कारण मंडल आत्मा के लिये बड़े भारी जंगल की भाँति हैं

और अकेले उन्हें पार करना बहुत ही ख़तरनाक है।

इस संबंध में मौलाना रूम हमें बतलाते हैं :

यार बायद राह रा तनहा मरौ,
अज़ सरे खुद अंदरीं सहरा मशौ।

(इस रास्ते में किसी सहयात्री को साथ ले लो और अकेले ही यात्रा मत करो। अपने आप स्वयं ही इस रूहानी मंजिलों के जंगल को पार करने की कोशिश मत करना।)

हाफ़िज साहिब भी यही सलाह देते हैं :

कताअ ई मरहला बे हमरहीए ख़िज़र मकुन।
जुल्मात अस्त बतर्स अज़ ख़तरहे गुमरही।

(इन मंज़िलों को स्वयं ही पार करने की कोशिश मत करना। इस रास्ते पर अँधेरा है और तुम अपना रास्ता भटक जाओगे।)

अध्याय 8

गुरु बिन घोर अंधियार

सत्गुरु के बिना हम सब अंधेरे में रहते हैं और हकीकत (सच्चाई) की समझ नहीं आती। सत् या हकीकत एक अन-लिखा कानून और अनबोली भाषा है और संत सत्गुरु की तवज्जो के बिना इसे बिल्कुल नहीं समझा जा सकता। संसार का मायाजाल और इसके आकर्षण इतने बड़े हैं कि अस्थिर वस्तु स्थिर लगती है, असत्य सत्य जैसा प्रतीत होता है और हम जन्म से यहाँ रह रहे इस मायाजाल के पर्दे को फाड़ कर बाहर नहीं निकल सकते। केवल सत्गुरु की कृपा से ही जीवात्मा मन-इंद्रियों के घाट से ऊपर आ कर उच्चतर दिव्य मंडलों में प्रवेश करके मुक्ति को पा सकती है।

सतिगुर बाझहु घोर अंधारा डूबि मुए बिनु पाणी।। (1275)

(सत्गुरु बिना घोर अंधेरा है और आत्मा अथाह गहराइयों में डूब जाती है।)

जब तक किसी जीवित सत्गुरु की कृपा से आत्मा अपने आप को नहीं जान लेती तब तक यह आनंद का अनुभव नहीं कर सकती। सत्गुरु इसको उस पराविद्या की दीक्षा देता है जिस का अनुभव मानव शरीर रूपी प्रयोगशाला में ही हो सकता है।

गुर बिनु घोरु अंधारु गुरु बिनु समझ न आवै।।
गुर बिनु सुरति न सिधि गुरु बिनु मुकति न पावै।।
गुरु करु सचु बीचारु गुरु करु रे मन मेरे।।
गुर करु सबद सपुंन अघन कटहि सभ तेरे।।
गुरु नयणि बयणि गुरु गुरु करहु गुरू सति कवि नल कहि।।
जिनि गुरू न देखिअउनहु कीअउ ते अक्यथ संसार महि।।(1399)

(सत्गुरु के बिना घोर अंधकार है और जीव को ज्ञान नहीं मिल सकता। सत्गुरु के बिना आत्मा अपने आप को नहीं जान सकती और मुक्त नहीं हो सकती। मैं तुम्हें सच बतलाता हूँ कि तुम्हें सत्गुरु धारण करना चाहिये। ऐ मन! तू किसी संत-सत्गुरु की शरण में जा। किसी 'शब्द' के अनुभवी सत्गुरु को गुरु धारण कर। वह तुम्हारे सभी पापों को धो देगा। सत्गुरु अपनी तवज्जो और वचनों, दोनों तरह से सत् का अनुभव प्रदान करता है। जिस ने कभी संत-सत्गुरु को नहीं देखा, न ही उसे धारण किया, वह इस दुनिया में अपना जीवन केवल व्यर्थ ही गंवाता है।)

जीव हमेशा ही घोर अंधकार में रहता है। अगर वह आँखें बंद करता है तो अंतर में अंधकार नज़र आता है। वह अज्ञान के अंधकार से घिरा रहता है। जो जीव को इस अंधकार से छुड़ा सके, उसे 'गुरु' कहा जाता है। 'गुरु' शब्द दो अक्षरों से बना है - 'गु' का अर्थ है अंधकार और 'रु' का अर्थ है ज्योति। अत: जो हमें अंधकार से प्रकाश, असत् से सत् और मृत्यु से अमरत्व की तरफ ले जा सके, उसे 'गुरु' कहते हैं।

प्रसद्धि कवि कालीदास गुरु के बारे में बतलाते हैं :

गुरु सो जो घोर विच करे चानण बाहों पकड़ के रब दिखा देवे।

(गुरु वह है जो घोर अंधेरे में प्रकाश कर दे और बाँह पकड़ कर प्रभु को दिखा दे।)

क्योंकि जीव अज्ञान के अंधकार में लिपटा हुआ है, उसके सभी कार्य भी अज्ञान से उत्पन्न होते हैं और वे उसे बंधन में ही डाले रखते हैं।

संत बतलाते है कि संत-सत्गुरु के मार्गदर्शन के बिना हमारे सभी नेक कर्म और नेक कार्य जैसे कि धर्मग्रंथों का पढ़ना, व्रत रखना, रात्रि

जागरण, तीर्थयात्रा, सामाजिक कर्मकांड, रीति-रिवाज, पुराने धार्मिक अनुष्ठानों व नियमों का पालन आदि सब जीवत्मा को मुक्त कराने में कोई सहायता नहीं कर पाते।

इसी लिए कबीर साहब कड़े शब्दों मे हमें चेतावनी देते हैं :

गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन दान हराम है, जाय पूछहु वेद पुरान।।

(बिन गुरु के माला फेरना और दान देना आदि बेकार है, चाहे वेदों और पुराणों से जा कर पूछ लो।)

बुल्लेशाह हमें बतलाते हैं :

बिन मुर्शिद कामिल बुल्लेआ तेरी ऐवें गई इबादत कीती।

(ऐ बुल्ला! मुर्शिद के बिना तुम्हारी सारी भक्ति निष्फल ही रह जायेगी।)

अंतरीय नेत्र खुले बिना तथा अंतरीय सत्ता से संबंध स्थापित हुए बिना सारे कर्म-धर्म बेकार हैं। हमें ऐसे सत्गुरु को खोजने की आवश्यकता है जो हमें बाहर से हटाकर अंतर्मुख करे, आत्मा को इंद्रियों के घाट से ऊपर खींचे और एक-एक करके ऊपर ऊंचे से ऊंचे आध्यात्मिक मंडलों में ले जाए, जब तक कि आत्मा अपने निजघर, सचखंड या मुकामे-हक में वापस न पहुँच जाये। वह हमारा अचूक और विश्वसनीय मार्गदर्शक है जो दिव्य ज्योति प्रदान कर के अज्ञान रूपी अंधकार के सब भ्रमों को नष्ट कर देता है।

सतिगुरु मिलै अंधेरा जाइ।। जह देखा तह रहिआ समाइ।। (877)

(सत्गुरु के मिलने से अज्ञान का अंधकार नष्ट हो जाता है और हर तरफ जहाँ देखो, सत्गुरु ही सत्गुरु दिखाई देता है।)

अगर हमारी आँखों में देखने की शक्ति नहीं है तो सैंकड़ों चंद्रमाओं व हज़ारों सूर्यों की ज्योति से हमारा कुछ भला होने वाला नहीं है। इतना

अध्याय 9

ऐतिहासिक प्रमाण

हमारे पास ऐतिहासिक प्रमाण हैं जो यह दर्शाते हैं कि आत्मिक मंडलों में अपने आप कोई नहीं पहुँच सकता। शास्त्रों में वर्णन आता है कि नारद को तब तक विष्णुपुरी में प्रवेश नहीं करने दिया गया जब तक कि उसने गुरु धारण नहीं किया था।

महर्षि वेदव्यास के पुत्र शुकदेव स्वामी, जिन्हें गर्भ से ही ज्ञान प्राप्त था, तब तक विष्णुलोक में प्रवेश नहीं पा सके जब तक कि उन्होंने राजर्षि जनक को अपने आध्यात्मिक गुरु के रूप में स्वीकार नहीं कर लिया।

कहीं भी ऐसा उदाहरण नहीं मिलता जबकि बिना गुरु धारण किए कोई जीव अपने आप रूहानी मंडलों में चढ़ाई कर पाया हो।

सभी जन्मजात संतों को जो जन्म से पराविद्या का ज्ञान लेकर संसार में आते हैं, यद्यपि गिनती के ही हैं, भी मर्यादा बनाए रखने के लिए गुरु धारण करना पड़ता है।

उदाहरण के लिये कबीर साहब ने स्वामी रामानंद को गुरु के रूप में स्वीकार किया। आत्मिक पृष्ठभूमि पूर्ण होने के बाद भी ऐसी हस्तियाँ साधु-संतों की संगति में रहती हैं और उनसे लाभ उठाती रहती हैं।

गुरु अमरदास हमें बतलाते हैं कि प्रभु का यह नियम है कि जीव तब तक उसके बारे में सोच भी नहीं सकता जब तक किसी संत-सत्गुरु के द्वारा चेताया न जाये:

धुरि खसमै का हुकमु पइआ विणु सतिगुर चेतिआ न जाइ।।
(556)

आगे,

मेरे पास कोई व्यक्ति नहीं आ सकता जब तक कि मेरा पिता, जिसने मुझे भेजा है, उसे न बुलाए और अंतिम दिन मैं उसे ऊपर ले जाऊँगा। *– जॉन 6:44 (बाइबल)*

साधारण मनुष्य संत–सत्गुरु के बिना अपना निर्वाह नहीं कर सकते। भगवान राम और भगवान कृष्ण को भी, जो भगवान विष्णु के अवतार थे, क्रमशः महर्षि वशिष्ठ और इंगरिस ऋषि को गुरु रूप में धारण करना पड़ा और उनकी आज्ञा में रहना पड़ा।

जब इतने ऊँचे व्यक्तियों को भी, जिनका हुक्म कारण मंडल तक चलता है, आध्यात्मिक मार्गदर्शक की आवश्यकता पड़ी तो हम साधारण मनुष्य तो इस मूलभूत आवश्यकता के बिना बच ही नहीं सकते।

गुरु नानक बड़े ज़ोरदार शब्दों में फरमाते हैं कि गुरु की महत्ता ब्रह्मा, नारद और वेद व्यास से जानी जा सकती है :

भाई रे गुर बिनु गिआनु न होइ।।
पूछहू ब्रहमे नारदै वेद बिआसै कोइ।। (59)

तुलसी साहब फरमाते हैं :

राम कृष्ण ते को बड़ो, तिन भी तो गुरु कीन।
तीन लोक के नायका गुरु आगे आधीन।।

(राम और कृष्ण से कौन बड़ा होगा? उनको भी गुरु धारण करना पड़ा। तीनों लोकों–स्थूल, सूक्ष्म और कारण का स्वामी होने पर भी उन्हें गुरु के सामने नत–मस्तक रहना पड़ा।)

जिस किसी को भी परमार्थ में सफलता मिली, वह किसी संत सत्गुरु की कृपा से ही प्राप्त हुई। राजर्षि जनक को महर्षि अष्टावक्र द्वारा आध्यात्मिक विद्या का अनुभव प्राप्त हुआ। गोरखनाथ को दीक्षा

मछंदरनाथ से प्राप्त हुई। पांडवों के योद्धा राजकुमार अर्जुन को अध्यात्म–विद्या का अनुभव भगवान कृष्ण से मिला। स्वामी विवेकानंद भी दक्षिणेश्वर के संत रामकृष्ण परमहंस के चरणों में बैठे।

सिक्खों में गुरु नानक ने लहना को ढाला और उस में अंगद (अपना अंग) को प्रकट किया जिस ने बाद में अमरदास को गुरु पद के लिए तैयार किया और आगे इसी तरह से क्रम चलता रहा।

मौलाना रूम फरमाते हैं कि उन्हें आत्मिक विकास शम्स तबरेज़ से प्राप्त हुआ।

मौलवी हरगिज़ न शुद मौलाए रूम।
ता गुलामे शम्स तबरेज़ी न शुद।

(मौलवी रूम तब तक मौलाना रूम न बन सका, जब तक कि शम्स तबरेज़ की उस पर कृपा नहीं हुई।)

आगे,

बया साकी इनायत कुन तू मौलानाए रूमी रा,
गुलामे शम्स तबरेज़म कलन्दर वार में गोयम।

(ऐ सत्गुरु साकी! अपने मौलाना पर दया–दृष्टि रखना; मैं कलन्दर की तरह कहता हूँ कि मैं शम्स तबरेज़ का गुलाम हूँ।)

अनेक महात्माओं ने अपनी वाणियों में अपने अपने गुरु का ज़िक्र किया है पर कुछ महात्माओं ने ऐसा नहीं भी किया लेकिन इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि ज्योति से ही ज्योति जगती है, जीवन से ही जीवन की प्राप्ति होती है और मन और माया में लंपट जीव तब तक ब्रह्मांडीय चेतनता में नहीं जाग सकते जब तक कि कोई संत–सत्गुरु अपनी मदद से उन्हें ऊपर न खींचे।

अध्याय 10

गुरु नानक से पहले और बाद

भूखे के लिये रोटी और प्यासे के लिये पानी सदा ही होता है। जो बच्चा पाँच सौ वर्ष पहले जन्मा, प्रकृति ने उसके लिये माता की छाती में दूध उपलब्ध कराया, जो बच्चा हज़ारों वर्ष पहले जन्मा, उसके लिये भी ऐसा ही प्रबंध था और जो बच्चे आजकल जन्म लेते हैं, उनके लिये भी आहार का यही प्रबंध है।

प्रकृति में 'माँग और पूर्ति' (demand and supply) का नियम अटल है। ठीक इसी प्रकार यह नियम आध्यात्मिक मामलों में भी पूर्ण रूप से लागू होता है।

जिनको परमार्थ का शौक गुरु नानक साहब के आने से पहले हुआ या आज होता है या आगे होगा, उन की अभिलाषाओं की संतुष्टि हुए बिना नहीं रह सकती।

एक या दो शताब्दियों के किसी विशेष समय को गुरुओं का युग कहना और यह कहना कि उस विशेष समय से पहले या बाद में कोई संत-सत्गुरु नहीं होंगे, 'माँग और पूर्ति' के मूलभूत सिद्धांत के विरुद्ध है और इसी लिये यह गलत है।

महापुरुषों की शिक्षाएँ किसी समय विशेष के लिये न होकर सभी जमानों के लिये होती हैं। वे अमर सत्य के सिद्धांतों की बात करते हैं जो हमेशा के लिये सही होते हैं और सारी मनुष्य जाति का उन पर सांझा अधिकार होता है। उनका मूल संदेश यह होता है कि परमात्मा एक है और वह किसी सत्गुरु की कृपा द्वारा प्राप्त होता है। यह एक स्वयं सिद्ध सैद्धान्तिक सत्य है और इस विषय में शायद ही किसी टिप्पणी की आवश्यकता हो।

अनुराग सागर में कबीर साहब फरमाते हैं कि वे संसार में चारों ही युगों में अवतरित हुए।

गुरवाणी से बहुत समय पहले ही भगत-वाणी अस्तित्व में थी। गुरु ग्रंथ साहब और भाई गुरदास की कविताओं (वारों) से हमें पता चलता है कि हर युग में लोगों ने 'शब्द' या 'वाणी' से लाभ उठाया।

कृसनु बलभद्र गुर पग लगि धिआवै।।

(कृष्ण और बलभद्र दोनों ने ही गुरु के आगे शीश निवाया।)

नाम छीबा कबीरु जोलाहा पूरे गुर ते गति पाई।। (67)

(नामदेव छींबे और कबीर साहब जुलाहे ने अध्यात्म-ज्ञान गुरु से ही सीखा।)

बाणी वजी चहु जुगी सचो सचु सुणाइ।। (35)

(चारों ही युगों में शब्द-ध्वनि बजती चली आई है और सत् का संदेश देती रही है।)

सचा सबदु सची है बाणी।।

गुरमुखि जुगि जुगि आखि वखाणी।।(424)

('शब्द' सत्य है और 'वाणी' सत्य है। गुरमुखों ने हर युग में आकर इसी का वर्णन किया है।)

भाई बाला द्वारा लिखित गुरु नानक की जन्म साखी में बताया गया है कि गुरु नानक ने कहा है कि कलियुग में लोगों को परमात्मा के रास्ते पर ले जाने के लिये बहुत से संतों का आगमन होगा।

सत्तार जामे भगत जन चौदा सतिगुर राइ।।
भर बेड़े लै जाइगे संत जनां के पूर।।
बेमुख तुटे तुट मूए मनमुख न भए कबूल।।

(कलियुग में सत्तर भक्तों और चौदह संतों का आगमन होगा। वे

संत लोगों के जहाज भर कर प्रभु के घर ले जायेंगे। जो उन पर विश्वास नहीं करेंगे, वे भटकते रहेंगे और जो मनमुख हैं, वे कबूल नहीं किये जायेंगे।)

उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि दोनों— गुरु और गुरवाणी, हमेशा साथ-साथ रहे हैं। गुरु ही हमेशा से सत् के जिज्ञासुओं के लिये मददगार बनता रहा है।

जुगि जुगि संत भले प्रभ तेरे।। (1025)

(हे परमात्मा! आपके संत सदा ही संसार में उपस्थित रहे हैं।)

हरि जुगह जुगो जुग जुगह जुगो सद पीड़ी गुरु चलंदी।।
जुगि जुगि पीड़ी चलै सतिगुर की जिनी गुरमुखि नामु धिआइआ।।
(79)

(हे प्रभु! सभी युगों में गुरुओं की परंपरा चलती रही है। गुरुओं की परंपरा हमेशा चलती रहती है और उन्होंने सदा 'नाम' का ही प्रचार किया है।)